शोध मंथन, 2017 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X, Impact Factor 3.8942 (ICRJIFR)
UGC Aproved Journal No. 40908

भारतीय संविधान एवं धर्म की स्थिति

डॉ० अनुराधा सिंह
एसोसिऐट प्रोफेसर
एन०ए०एस० कॉलेज, मेरठ

सारांश

भारतीय संविधान का परिवेश धर्म का परिवेश नहीं है किंतु वह धर्म विरूद्ध भी नहीं है। भारतीय संविधान में उन प्रावधानों का उल्लेख किया गया है जिन पर व्यक्ति अपने–अपने धर्म के प्रति ना केवल आस्थावान रहने की सुविधा प्राप्त करेगा, बल्कि अपने–अपने धार्मिक विश्वासों के साथ बराबर जुड़ा रहेगा।

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:

डॉ० अनुराधा सिंह,

"भारतय संविधान एवं धर्म की स्थिति"

शोध मंथन,
सितम्बर 2017,
पेज सं0 199–203
http://anubooks.com/?page_id=581
Artcile No. 28

भारतीय संविधान एवं धर्म की स्थिति

डॉ० अनुराधा सिंह

भारतीय संविधान में धर्म की व्यक्तिगत सत्ता है जिससे धर्म–निरपेक्षता विचार का उदय हुआ है इसलिए इनकी परिभाषा है– ''धर्मनिरपेक्ष व्यक्ति वह है जो नैतिकता के आधार पर मानव जाति कल्याण के लिए चिंतनशील है। वह धर्म, धार्मिक व्यवस्थाओं और धार्मिक पूजा पद्धतियों पर ध्यान नहीं देता। यह तटस्थता इसी सीमा तक होती है कि सार्वजनिक शिक्षा और सार्वजनिक कार्यों की व्यवस्था भी इससे मुक्त होती है।'' इसी प्रकार की भावना दूसरे दृष्टिकोण से देखिए– ''ऐसा व्यक्ति सैद्धांतिक आधार पर प्रत्येक प्रकार की धार्मिक पूजा–पद्धति और वर्तमान जीवन को प्रभावित करने वाले प्रभावों का अस्वीकार करता है। वह यह आस्था रखता है कि शिक्षा तथा अन्य नागरिक विषयों की व्यवस्था किसी भी प्रकार के धार्मिक तत्वों के बिना व्यवस्थित की जानी चाहिए।'' ऐसी धर्म–निरपेक्षता की परिभाषा शब्दकोष में दी है, ''धर्म निरपेक्षता का अर्थ है कि सभी व्यक्तियों का ऐसा प्रभावी आचरण जो जीवन के धर्म निरपेक्ष सद्भाव को बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील है। ''जी. जे. होलीऑक ने भी कहा है'' धर्म निरपेक्षता एक ऐसा विचार है जो मनुष्य की नैतिक और बौद्धिक प्रकति को तात्कालीन जीवन लक्ष्य मानते हुए सर्वोच्च शिखर तक विकसित होने का प्रयास करता है।'' इस प्रकार से देखा जाए तो धर्म–निरपेक्ष चेतना एक राजनैतिक व्यवस्था और सामाजिक दर्शन है। यह मानवता पर ध्यान देती है जो नैतिकता की सूत्रधार एक कड़ी है जिससे राष्ट्र सुधारवाद की ओर बढ़ता है। इस संदर्भ में यह मत देखिए– ''धर्म निरपेक्षता मनुष्य के वर्तमान जीवन को अच्छा बनाने की ओर मानवता की भावना उत्पन्न करती है। धर्म–निरपेक्षता में सुधारवादी प्रवाह और मानवतावादी चिंतन जहां उसे विशुद्ध रूप से सांसारिकता से जोड़ने का प्रयास करता है, वहीं उसे धर्म और धार्मिक भावनाओं से मुक्त रखने का उपक्रम भी खोजता है। इस आधार पर धर्म–निरपेक्षता को एक ऐसे दर्शन के रूप में देखा जा सकता है'' धर्म–निरपेक्षता का वास्तव में अर्थ है, एक ऐसा दर्शन जिसकी धार्मिक नैतिकता, सहिष्णुता और उपासना तथा आस्था के तार्किक आधार है। ऐसा व्यक्ति रंग, जाति, लिंग, संप्रदाय धर्म आस्था और जन्म की अन्य स्थितियों से मुक्त होकर चिंतन और प्रयास करता है।''

संवैधानिक उपबंध तथा धार्मिक स्वतंत्रता

भारतीय संविधान की संपूर्ण रचना उसकी उद्देशिका में की गई है। इसका स्वरूप इस प्रकार से है – हम भारत के लोग–भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व, संपन्न, समाजवादी, पंथ–निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक, गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता की अभीवृद्धि के लिए इस संचिधानको अंगीकृत, अधिनियमित तथा आत्मसमर्पित करते है।''

संविधान की चार धाराओं 25, 26, 27, 28 में धार्मिक स्वतंत्रता के संबंध में संवैधानिक सुरक्षा की व्यवस्थाएं है। संविधान सभा ने भारत के विभिन्न धर्मों की ओर विशेष रूप से धार्मिक अल्पसंख्यकों को ध्यान में रखते हुए अनेक प्रविधानों का उल्लेख किया है। अतः धार्मिक अधिकारों से संबद्ध प्रावधानों के कारण भी संविधान सभा में थोड़ा जिनके अनुसार धार्मिक स्वतंत्रता के

नाम पर धर्मत्व अथवा न्याय के अधीन धार्मिक नामों पर शिक्षा संस्थाओं को स्थापित करने और उनके द्वारा धार्मिक शिक्षा देने की व्यवस्था की गई थी।

संविधान के अनुच्छेद 25 के अनुसार, ''सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार एवं स्वास्थ्य तथा इस अध्याय के अन्य प्रावधानों के रहते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अंतःकरण की स्वतंत्रता का तथा धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने तथा प्रचार करने का समान अधिकार है।'' इस अनुच्छेद के उपबंध (2) को स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

अ. जो धार्मिक आचरण से संबंध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक अथवा किसी अन्य प्रकार की लौकिक क्रियाओं का विनियमन अथवा निरबंधन करती हो।

ब. हिंदुओं की सार्वजनिक धर्म संस्थाओं को हिंदुओं के सभी वर्गों और विभागों के लिए खोलती हो।

इस अनुच्छेद की दो व्याख्याओं में कहा गया है कि—

क. कृपाल धारण करना और लेकर चलना सिख धर्म का अंग समझा गया है।

ख. इसी अनुच्छेद की उपधारा (2) के अनुभाग (ब) में हिंदुओं में सिख धर्म, जैन और बौद्ध धर्म के अनुयायियों को भी समझा जाएगा और हिंदुओं के धार्मिक संस्था उसी के अनुसार होंगे।

अनुच्छेद 25(1) नागरिकों को, केवल भारतीय नागरिकों को ही नहीं, प्रत्येक नागरिक को अपने अंतःकरण की स्वतंत्रता, धर्म को अबाध रूप से मानने की सुविधा, आचरण करने तथा प्रचार करने का अधिकार देता है। यह अधिकार व्यक्ति के अतःकरण के आधार पर सुलभ होता है वही सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य पर बाधक होता है।

अनुच्छेद 26 में सभी व्यक्तियों को सार्वजनिक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के आधीन रहते हुए अपने—अपने धार्मिक संप्रदायय या किसी विभाग की (अ) धार्मिक संस्थाओं की स्थापना, (आ) धार्मिक कार्यों संबंधी विषयों के प्रबंध, (इ) चल तथा अचल संपत्ति के अर्जन और स्वामित्व तथा (ई) ऐसी संपत्ति के कानून द्वारा प्रशासन करने का अधिकार है।

वी. एन. शुक्लाने इन दोनों अनुच्छेदों को एक—साथ रखकर ही पढ़ने पर बल दिया है। इनकी मान्यता है कि ''अनुच्छेद 25 व्यक्ति के व्यक्तिगत अधिकार और अनुच्छेद 26 संगठित संस्थाओं के अधिकार की विवेचना करते हैं। यह दोनों अनुच्छेद धार्मिक विश्वासों और सिद्धांतों की रक्षा और सुरक्षा के लिए है। इन अनुच्छेदों में धार्मिक सहिष्णुता के जिन आदर्शों को स्थापित करने का प्रयास किया गया है, वह भारतीय सभ्यता के आदिकाल से ही उससे संबद्ध है।''

प्रत्येक व्यक्ति किसी भी धर्म को अपना सकता है, जिसे उसकी आत्मा स्वीकार करती हो, उस पर किसी प्रकार के भी प्रतिबंध आरोपित नहीं किए जा सकते, लेकिन कोई भी व्यक्ति इस स्वतंत्रता का सार्वजनिक व्यवस्था, स्वार्थ और नैतिकता के विपरीत स्थिति में उपयोग नहीं कर सकता।'' सर्वोच्च न्यायालय ने रणजी लाल मोदी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के संदर्भ में इसी भावना को अभिव्यक्त किया, जिसमें सार्वजनिक हित में धार्मिक स्वतंत्रता पर भी प्रतिबंध लगाया गया है।''

राज्य सामाजिक सुधार और सामाजिक कल्याण के लिए कानून बनाने का अधिकार रखता है इसलिए अनुच्छेद **27** के अनुसार, ''किसी भी व्यक्ति को ऐसे कर देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता जिसकी आय किसी धर्म विशेष अथवा धार्मिक संप्रदाय की उन्नति अथवा पोषण में व्यय करने के लिए विनियुक्त कर दी गई हो।'' इस अनुच्छेद का अभिप्राय है कि यह तभी लागू होगा जबकि अधिभार को कर के रूप में बताया गया हो लेकिन यदि वह शुल्क के रूप में है तब यह अनुच्छेद प्रभावी नहीं होता। ''भारतीय संविधान में शुल्क और कर में विधायकी उद्देश्यों के लिए अलग–अलग अंतर स्थापित किए है।''

अनुच्छेद **28**में यह व्यवस्था की गई है, राज्य निधि से पूर्णरूपेण पोषित किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी। यह व्यवस्था किसी ऐसी शिक्षा संस्था पर लागू न होगी जिसका प्रशासन तो राज्य करता हो परंतु जिसकी स्थापना किसी ऐसे न्यास के आधीन हुई हो, जिसके अनुसार उस संस्था में शिक्षा देना आवश्यक हो। इसके अतिरिक्त राज्य से अभिजात अथवा राज्य से अधिक सहायता पाने वाले शिक्षा संस्थान में पढ़ने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी संस्था में दी जाने वाली शिक्षा में भाग लेने के लिए अथवा उसमें या उससे लगे संस्थान में की जाने वाली धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। जब तक की वह व्यक्ति स्वयं, यदि वह व्यस्क है, अन्यथा उसका संरक्षक इसके लिए अनुमति ना दें।

डॉ० अंबेडकर ने धर्म से जुड़ी शिक्षा संस्थाओं का विरोध किया था। इन की राय थी कि ''कुछ संस्थाएं ऐसी है जिनको धार्मिक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से स्थापित किया गया है। इस प्रकार की शिक्षा संस्थाओं के संबंध में राज्य की भूमिका न्यासधारी की होनी चाहिए, और यह स्पष्ट है कि जब आप किसी न्यास को स्वीकार करते हैं तो आपको उससे संबद्ध सभी दायित्व का पूर्ण रूप से पालन करना चाहिए।'' डी. ए. वी. कॉलेज जालंधर बनाम पंजाब राज्य में गुरू नानक जी के कषतित्व और व्यक्तित्व की व्यवस्था की गई और अदालत में उस पर वाद शुरू हुआ। इसमें जस्टिस जगमोहर रेड्डी ने विश्वविद्यालय का पक्ष लेते हुए निर्णय दिया है किः–

अ. राज्य प्रत्येक व्यक्ति को उसके अंतःकरण के आधार पर धर्मानुसार आचरण करने की सहमति देता है।

ब. राज्य ने धार्मिक अधिकारों को राजनीति और राजनैतिक प्रभुत्व से मुक्त रखा है।

भारतीय संविधान की शक्ति उसकी यह चिंतन धारा है कि धर्म व्यक्ति की निजी आवश्यकताओं, अनुभूतियों, आस्थाओं, संकल्प और विश्वासों की धरोहर है, राज्य ना उसमें हस्तक्षेप करता है और कुछ उपवादों को छोड़कर राज्य न उन्हें प्रतिबंधित करता है इसलिए धर्म के प्रति राज्य की तटस्थ दृष्टि है और राज्य निर्लिप्तता और तटस्थता को बनाए रखने के लिए संकल्पबद्ध है। भारतीय संविधान में धर्म की यह वैध स्थिति किसी विशेष धर्म को उच्चता और दूसरे धर्म को हेय मानने का निषेध करती हुई दिखलाई पड़ती है।

प्राचीन भारत में धर्म व्यक्ति की व्यक्तिगत आस्था का केद्र बिंदु था। समाज और राज्य इस व्यवस्था में सहयोगी थे, किंतु विरोधी नहीं इसलिए संपूर्ण समाज धर्म, अध्यात्मिकता,

नैतिकता, सात्विकता, परोपकारी और कल्याणबोधक आकांक्षाओं की पूर्ति करने में लगा हुआ है। जब राजाओं के व्यवहार में भोग–विलासी मानसिकता का प्राबलय होने लगा तब जन– समाज में ऋषि परंपरा का विद्रोह हुआ जो हिंसावादी हो गया था।

मुस्लिम काल में बलात धर्मांतरण के प्रकरण और अंग्रेजों के ऐसे ही प्रकरणों में धर्म की स्थिति को गौण कर दिया था और राजनीति को वर्चस्वता दी जाने लगी थी। अतः स्वतंत्रता के पश्चात स्थिति में परिवर्तन हुआ जिसके कारण अब राज्य ना किसी विशेष धर्म का समर्थक है और ना विरोधी इसलिए वह किसी विशेष धर्म का संरक्षक भी नहीं कर पाएगा।

संदर्भ

1. वी.एन.शुक्ला, द कांस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया, ईस्टर्न बुक कंपनी, दिल्ली, १६७५।.
2. ए.एल.आर, सुप्रीम कोर्ट, इंडिया, १६५७.
3. डॉक्टर बी.आर. अम्बेडकर, कंस्ट्यूशनल असेंबली डिबेट्स, पार्ट 7.
4. द एनसाइक्लोपीडिया, सोशल साइंसेज, वॉल्यूम 13.
5. जी.जे. होलियाक, प्रिंसिपल ऑफ सेक्युलरिज्म।.
6. भारतीय संविधान.